गाथा (GAATHA)
स्त्री अस्मिता और विमर्श की सहकर्मी-समीक्षित, अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका

ISSN : 3049-3463(Online)
Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No.- 27-31
©2025 Gaatha
https://gaatha.net.in
Author :
निवेदिता सिंह
शोधार्थी, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा.

Corresponding Author :
निवेदिता सिंह
शोधार्थी, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा.

नारी चित्रण की त्रिवेणी : साहित्य सपुत प्रेमचंद

-

"कहानी हृदय की वस्तु है, नियम की वस्तु नहीं है। नियम हैं और वे उपयोगी होने के लिए हैं। हृदय के दान में वे जब अनुपयोगी हो जाएं, तब बेशक उन्हें उल्लंघनीय मानना चाहिए।- (प्रेमचंद जैनेन्द्र जी से)

हिंदी कहानी का प्रकार और परिणाम दोनों ही दृष्टियों से वास्तविक विकास विवेच्य काल में ही हुआ, यह एक निर्विवाद तथ्य है। जिस प्रकार प्रेमचंद इस काल के उपन्यास-साहित्य के एकच्छत्र सम्राट बने रहे, उसी प्रकार कहानी के क्षेत्र में भी उनका स्थान अद्वितीय रहा। उनकी कहानियों की विशेषता यह है कि उनकी स्वयं की ही कहानियों में हिंदी कहानी के विकास की प्रायः सभी अवस्थाएं दृष्टिगोचर हो जाते हैं। उनकी आरंभिक कहानियों में क़िस्सागोई, आदर्शवाद और सोद्देश्यता की मात्रा अधिक है। यद्यपि व्यावहारिक मनोविज्ञान का पुट देकर मानव चरित्र के सूक्ष्म उद्घाटन की क्षमता के फलस्वरूप प्रेमचंद ने अपनी कहानियों को विशिष्ट बना दिया है, पर, उनकी आरंभिक कहानियों का कच्चापन और यथार्थ की उनकी कमज़ोर पकड़ अत्यंत स्पष्ट है।..... प्रेमचंद की कहानियां अपने आसपास की ज़िंदगी से जुड़ी हुई है। वे ग्रामीण जीवन से अधिक संबद्ध थे, अतः उनकी अधिकतर कहानियों का विषय गांव की ज़िंदगी से निःसृत है। पर उनकी बहुतेरी कहानियां क़स्बाई, ज़िन्दगी, सत्याग्रह आन्दोलन, स्कूल और कॉलेज के वातावरण तथा ज़मीनदारों, साहुकारों, क्लर्कों एवं उच्च पदाधिकारियों की समस्याओं और परिवेश की उपज है। इससे उनके अनुभव क्षेत्र के वैविध्य और विस्तार का पता चलता है। *1

प्रेमचंद की अनुभूति जीवन के चारों ओर फैले हुए यथार्थ से है। उनकी आंखों में वो सब चित्र समाएं हुए थे जो समाज में पल-पल घटित हो रहे थे और उन्होंने अपने आस पास के वातावरण को बहुत अच्छी तरह से देखने के बाद लिखते थे। वे जो देखते थे वो सब यथार्थ हुआ करता था और जो चाहते थे वो सब आदर्श था। इसी यथार्थ और आदर्श ने उन्हें आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी साहित्य सपुत के रूप में प्रस्तुत कर दिया। "उन्नीसवीं सदी के दूसरे और तीसरे दशक में लिखी गई कहानियों से पता

चलता है कि उनके रचनात्मक दृष्टिकोण में पर्याप्त परिवर्तन हुआ। अब आदर्श की नियमानुवर्तिता के चक्कर से उबरकर वे यथार्थ का साक्षात्कार करते हुए प्रतीत होते हैं। वे स्थूल इतिवृत्तात्मकता को पीछे छोड़ कर संवेदना को छूते हुए नजर आते हैं। चरित्रों के चित्रण में मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताओं का समावेश भी उनमें आ गया है। नाटकीयता तथा व्यंग्य के पैनेपन के कारण उनमें जीवंतता और प्रभावान्विति की घनता आ गयी है। *2

प्रेमचंद उन लेखकों में हैं जिन्होंने अपने रचनाभिमान को सबसे ऊपर रखा है। किसी प्रकार के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक दबाव को उन्होंने कभी नहीं माना।.... प्रेमचंद की कहानियां अपने विधान में उनके उपन्यासों से अधिक निर्दोष हैं। जीवन के हर पक्ष उनमें अंकित हुए हैं। कुल मिलाकर समकालीन जीवन की वे प्रति सृष्टि कही जा सकती हैं और पारिवारिक जीवन के आदर्श यहां भी केन्द्र में हैं। पर कहानी माध्यम की अपनी सीमा में है कि सीमित आकार के कारण उतना नहीं जितना कि अपने एककोशीय विधान के कारण वह किसी केन्द्रीय रचना-दृष्टि को विकीर्ण नहीं कर पाती। जीवन के विविध पक्षों के टकराहट में से जो समग्रता का भाव उपजता है वह यहां संभव नहीं होता। यह निरा संयोग नहीं है कि सिर्फ कहानी-लेखन के लिए आज तक साहित्य का नोबेल पुरस्कार नहीं दिया गया। * 3

प्रेमचंद की कहानियों का संसार बहुत व्यापक और विविधतापूर्ण है। यह अपने काल के उत्तर भारत का शब्द-रूप है। प्रेमचंद की दृष्टि निसंदेह वैज्ञानिक और प्रगतिशील है, किंतु, वे अपनी कहानियों को जनमानस द्वारा अंगीकृत भी बना सकते हैं- यह उनकी निजी रचनात्मक सफलता है। उनकी प्रारंभिक कहानियों पर लोकवार्ताओं का प्रभाव है। *4

प्रेमचंद भारतीय समाज के लिए सदा प्रासंगिक रहे हैं पर पिछले दिनों उनकी प्रासंगिकता और बढ़ गई है। हमारा समाज आगे बढ़ने के बदले पीछे जा रहा है। जिस पिछड़ेपन के विरुद्ध प्रेमचंद ने संघर्ष किया था, वह विशेष रूप से हिंदी प्रदेश में सघन हो गया है। आर्थिक स्तर पर जनता की ग़रीबी अपनी जगह है, राजनीतिक स्तर पर देश का विघटन और तीव्र हो गयी। सांस्कृतिक स्तर पर द्विज और शुद्र का भेद, हिन्दू और मुसलमान का भेद और बड़ा है। धार्मिक अंधविश्वासों को उभारने में, बड़े स्तरों पर हत्याकांड रचाने में, जनता को तरह तरह से आतंकित करने में पीछे नहीं रहा.... प्रेमचंद का साहित्य। इस परिस्थिति को समझने में सहायता करता है। उनकी भाषा का रस उनकी कथा पढ़ने का मज़ा अपनी जगह है; उनके साहित्य का कलात्मक रूप बहुत बड़ा है। पर वह साहित्य आज के भारत का बहुत बड़ा, लगभग अद्वितीय, ऐतिहासिक दस्तावेज़ भी है। *5

विराट मानव-संस्कृति के साधक प्रेमचंदः - "प्रेमचंद शताब्दियों से पददलित, अपमानित और निष्पेषित कृषकों की आवाज़ थे; पर्दे में कैद, पद-पद पर लांछित और असहाय नारी-जाति की महिमा के जबरदस्त वकील थे; गरीबों और बेकसों के महत्त्व के प्रचारक थे। अगर आप उत्तर भारत के समस्त जनता के आचार-विचार, भाषा भाव, रहन-सहन, आशा आकांक्षा, दुःख-सुख और सूझ-बूझ को जानना चाहते हैं तो प्रेमचंद से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता। झोंपड़ियों से लेकर महलों तक, खोमचे वालों से लेकर बैंकों तक, गांव से लेकर धारा-सभाओं तक, आपको इतने कौशलपूर्वक और प्रामाणिक भाव से आपको कोई नहीं ले जा सकता। आप बेखटके प्रेमचंद का हाथ पकड़कर मेड़ों पर गाते हुए किसान को, अंतःपुर में मान किए हुए बैठी प्रियतमा को, कोठे पर बैठी हुईं वारवनिता को, रोटियों के लिए ललकते हुए भिखमंगों को, कूट परामर्श में लीन गोयेन्नों को, ईर्ष्या परायण प्रोफेसरों को, दुर्बल हृदय बैंकरों को, साहस परायण चमारिन को, ढोंगी पंडितों को, फरेबी पटवारी को, नीचाशय अमीर को देख सकते हैं और निश्चित होकर विश्वास कर सकते हैं और कह सकते हैं कि आपने जो कुछ देखा वह गलत नहीं है। *6

यही है भारत की विराट मानव संस्कृति जो प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जिसे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने बड़े सहज रूप में परिचित करा दिया है। जिस प्रकार सूरदास जी ने श्रृंगार और वात्सल्य का कोना-कोना झांक आया है उसी प्रकार प्रेमचंद जी ने मानवीय संस्कृति का। उन्होंने एक भी पक्ष नहीं

छोड़ा है जिसको रचकर अन्य साहित्यकार अपने आप पर गर्व कर सके कि उसने कुछ नयी बात कही है। नया साहित्य सृजन किया है।

प्रेमचंदः एक महान् शिक्षक के रूप में : प्रेमचंद इसलिए महान् शिक्षक है कि वे अपनी कहानियों के माध्यम से वो सभी बातें सीखा देते हैं, जो विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, संस्थाएं नहीं सीखा पाती हैं। वे हमारे सामने ऐसा ही समाज रखते हैं जैसा वह है। वे काला रंग को काला कहते हैं, गोरे रंग को गोरा। भ्रष्टाचारी को भ्रष्टाचारी और ईमानदार को ईमानदार। रंगे हुए सियार के रंग उतारते हैं और समाज से खिलवाड़ करने वाले को वे कभी पसंद नहीं करते। रामविलास शर्मा जी ठीक ही कहते हैं- "प्रेमचंद की कहानियां केवल मनोरंजन के उद्देश्य से नहीं लिखी गई है। उन सभी में कोई न कोई सुझाव, जीवन के प्रति नया दृष्टिकोण, किसी समस्या का हल जरूर मिलता है। यह उनकी खूबी है कि सारी बात वह ऐसा चित्र खींचकर कहते हैं कि कहानी में रूखापन नहीं आने पाता। उनके चित्र बड़े ही सजीव होते हैं मानो घटना उनकी आंखों के सामने हो रही हो और प्रेमचंद उसे नोट करते जाते हैं। *7

प्रेमचंद की आदर्श नारी पात्रः "जर्मनी को यदि अपनी सेना पर, फ्रांस को अपनी विलासिता पर, इंग्लैंड को अपने वाणिज्य पर गर्व है तो भारतवर्ष को अपने पातिव्रत पर घमंड है। क्या यूरोप निवासियों के लिए यह लज्जा की बात नहीं हैं कि हैमर और वर्जिल, डैटे और गेटे, शेक्सपियर और ह्यूगो जैसे उच्च कोटि के कवि एक भी सीता या सावित्री कि रचना नहीं कर सकें। वास्तव में यूरोपीय समाज आदर्शों से वंचित है!"* 8

प्रेमचंद की कहानियों में नारी की जो रचना हुई है वह भारतीय समाज से ली गई है। 'शाप' की विद्याधरी अत्यंत गंभीर, शांत प्रकृति की स्त्री थीं। इसमें पतिव्रत का आदर्श दिखाया गया है। राजपूत योद्धा के गलत स्पर्श के कारण उसे वह शाप दे देती है और व एक सिंह बन जाता है।

"तूने काम के वश होकर मेरे शरीर में हाथ लगाया है। मैं अपने पतिव्रत के बल से तुझे शाप देती हूं कि इसी क्षण पशु हो जा। "वह योद्धा उसी समय पशु हो जाता है। मनुष्य से पशु बने हुए राजपूत योद्धा के पत्नी की कहानी है और पतिव्रत की महिमा का चित्रण किया गया है। जिसके पति को शाप मिला होता है वह भी प्रतिज्ञा करती है कि अपने पति को पशु से मनुष्य बना कर ही रहूंगी। "मैं राजपूत की कन्या हूं। मैंने विद्याधरी से अधिक अनुनय विनय नहीं की। उसका हृदय दया का आगार था। यदि मैं उसके चरणों पर शीश रख देती तो कदाचित् उसे मुझ पर दया आ जाती; किंतु, राजपूत की कन्या इतना अपमान नहीं सह सकती। वह धृणा का घाव सह सकती है, क्रोध की अग्नि सह सकती है, पर दया का बोझ उससे नहीं उठाया जाता।"9

'बड़े घर की बेटी' की आनंदी घर की मर्यादा बनाए रखने के लिए अपने ऊपर हुए प्रहार को भी सह लेती है, लेकिन बंटवारा नहीं होने देती है, 'मर्यादा की वेदी' की प्रभा कहती है "एक अबला स्त्री के लिए सुंदरता प्राणघातक यंत्र से कम नहीं है। ईश्वर, वह दिन न आए कि मैं क्षत्रिय-जाति का कलंक बनूं। क्षत्रिय-जाति ने मर्यादा के लिए पानी की तरह रक्त बहाया है। उनकी हजारों देवियां परपुरुष का मुंह देखने के भय से सूखी लकड़ी के समान जल मरी हैं। ईश्वर, वह घड़ी न आए कि मेरे कारण किसी राजपूत का सिर लज्जा से नीचा हो। नहीं, मैं इसी कैद में मर जाऊंगी। राणा का अन्याय सहूंगी, जलूंगी, मरूंगी, पर इसी घर में। विवाह जिससे होना था, हो चुका। हृदय में उसकी उपासना करूंगी, पर कंठ के बाहर उसका नाम न निकालूंगी।"* 10

आदर्श का निर्वहन करने वालों का कोई उम्र नहीं होता है। वे जिस अवस्था में रहते है उसी अवस्था से इस नियम का पालन करते है। यही बात कथा-सम्राट ने अपनी कहानी 'बूढ़ी काकी' में दर्शाया है। एक छोटी सी बालिका ने पूरे समाज के सामने आदर्श का प्रतिनिधित्व कर रही है। वह यह नहीं देखती की माता जी मारेंगी, पिता जी डांटेंगे, भैया लोग स्नेह न करेंगे, इन सभी प्रकार के भयों को परास्त कर अपनी दादी को पुड़ी और सब्जी देने जा रही है। जिस रात्रि को आंख नहीं खुलती उस रात तक वह बच्ची जगी हुई है कि कुछ समय बीते और वह वहां पहुंचे, जहां बूढ़ी काकी भूखे पेट पड़ी हुई है।

हिंदी आलोचक विश्वनाथ त्रिपाठी जी कहते हैं- "प्रेमचन्द की कहानियों में नारी विविध रूपों में आती है। इस दृष्टि से उनकी 'बूढ़ी काकी' कहानी अनुपम है। जो असहाय और हास्यास्पद हैं, उनके मानसिकता को समझना महान् रचनाकारों के ही बस की बात होती है। * 11

यथार्थ-पथ को धारण करने वाली स्त्रियाँ: "तुम्हारे माता-पिता तुम्हें इतनी भी आजादी नहीं देंगे ? मुझे तो आश्चर्य यही है कि बेड़ियां पहनकर तुम कैसे रह सकती हो! मैं तो इस तरह घंटे भर भी नहीं रह सकती। ईश्वर को धन्यवाद देती हूं कि मेरे पिताजी पुरानी लकीर पीटने वालों में नहीं। वह उन नवीन आदर्शों के भक्त हैं, जिन्होंने नारी जीवन को स्वर्ग बना दिया है। नहीं तो मैं कहीं की नहीं रहती।"* 12

'दो सखियां' नामक कहानी की पद्मा अपनी सहेली चंदा से कहती कि वह ऐसे स्थान पर रह रही है जहां मैं एक क्षण भी न रह पाऊं। पर चंदा को उसका घर परतंत्रता की बेड़ी नहीं लगता। वह अपने घर में खुश है। यहां वही स्थिति हो गई जो सामने को दिखाई कुछ देता है और होता कुछ और ही है।

"रूप और यौवन के चंचल विलास के बाद कोकिला अब उस कलुषित जीवन के चिन्ह को आंसूओं से धो रही थी। विगत जीवन की याद आते ही उसका दिल बेचैन हो जाता और वह विषाद और निराशा से विकल होकर पुकार उठती- हाय! मैंने संसार में जन्म ही क्यों लिया? उसने दान और व्रत से उन कालिमाओं को धोने का प्रयत्न किया और जीवन के वसंत की सारी विभूति इस निष्फल प्रयास में लूटा दी।"* 13

कहानी आगा-पीछा की कोकिला अपने यथार्थ जीवन में भोग-विलास को अधिक महत्त्व देती है और वह मानवीय राह से भटक जाती है। जब वह एक बच्ची को जन्म देती तब फिर उसे याद आता है कि क्या उसे भी इस कलंक की कालिमा में जीना पड़ेगा। जीवन के कर्म इतना यथार्थ है कि हमें वो या खुशी देता है या फिर ग़म। व्यक्ति को कभी कभी अपने ही ऊपर संदेह होने लगता है कि क्या वह कर्म के बोझ से दब कर रह जाएगा। उससे उसे मुक्ति नहीं मिलेगी। ईश्वर का कोई भी सिद्धांत तो होगा जिससे वर्तमान जीवन के कलुषित कर्म को मिटा दिया जाए।

प्रेमचंद की नायिकाएं आदर्श को महत्त्व देती हैं। उन्हें संकटों की चिंता नहीं रहती, न तो रहता है संघर्ष का भय। वो अपने आदर्श के रास्ते को कभी छोड़ना नहीं चाहती और उस रास्ते पर से हटाने वालों को सुनती भी नहीं है। 'सती' की मुलिया अपने पति कल्लू के साथ अभावग्रस्त जीवन जीती है परन्तु सुखी सम्पन्न अपने देवर राजा के साथ नहीं जाती। जहर खा लेने की धमकी के बाद एक साड़ी भी लेती है तो पति से कह देती है कि राजा ने साड़ी दिया है। वह मज़ाक में लेती है। उसका चरित्र और चेतना बहुत ऊंची है। अभाव में उसका पति मृत्यु को प्राप्त होता है। फिर राजा आता है और अपने साथ रहने का प्रस्ताव देता है। परन्तु वह ठुकरा देती है। विधवा का ध्वंस वह झेलती है पर किसी को अपने चरित्र भ्रष्ट करने नहीं देती। कोकिला अपनी पुत्री को अपनी विभूति, अपनी आत्मा और अपने जीवन का दीपक मानती है और वह चाहती है कि इस ज्योति को वासना के प्रचंड आघातों से बचाऊंगी। उसे अपनी तरह नहीं बनने दूंगी। वह भगवान से सदैव प्रार्थना करती है कि उसकी बेटी किसी कांटों में न उलझे। अपना जीवन कैसा भी रहा हो व्यक्ति चाहता है कि अपने पुत्र या पुत्री का जीवन सुखद हो, सुंदर हो। प्रेमचंद इन सब चीज़ों को बहुत बारीकी से देखते हैं और उन्हें उजागर करते हैं।

निष्कर्षतः यह देखने को मिलता है कि प्रेमचंद उन तमाम विपदाओं को व्यक्त कर देना चाहते हैं जो मानव को दानव से मिला है और मिलता आ रहा है। वे शांति से नहीं बेचैनी में लिखते हैं और जब समाज का रूप अंधविश्वासों से भरा हुआ हो, दानवी प्रवत्ति का हो, व्यवहार राक्षसों सा हो, क्रोध पशुता सा हो, काम बलात्कारी की तरह हो, वहां लेखक का हृदय शांत नहीं रह सकता है, वहां वह उदिग्न होकर ही रचेगा। शांति तो उसे तब मिलती है जब वह समाज को देखना छोड़ दिया हो, उसको सुनना बंद कर दिया हो, उसके घाव को देखकर मुंह मोड़ लिया हो, उसकी सहायता करने से मना कर दिया हो। कोई भी लेखक शांति से लेखनी नहीं कर सकता और खासतौर पर वो जो पल-पल समाज का दुःख, दर्द महसूस कर रहा हो, भूखे बालकों को देख कर चिंता में पड़ा हो, राजनीति में हो रहे उथल-पुथल से

प्रभावित समाज को देखकर वह चैन से सो नहीं सकता। डॉ. रामविलास शर्मा जी प्रेमचंद की कहानियों का महत्त्व बताते हुए कहते हैं- अच्छी कहानी लिखने के लिए विषय-वस्तु का महत्त्वपूर्ण होना जरूरी है। लेखक को जीवन की गहरी जानकारी होनी चाहिए। प्रेमचंद में ये सब बातें थीं। इसलिए वे ऐसी कहानियां लिख सके जिनमें जनता ने अपने जीवन की झलक देखी। समाज की पीड़ित विधवाएं, सौतेली माताओं से परेशान बालक, महंतों और पुरोहितों से ठगे जाने वाले किसान, दूसरों की गुलामी करके भी पेट न भर पाने वाले अछूत, महाजन का सूद भरते भरते जिंदगी गारत करने वाले किसान, ये और इस तरह के सभी लोग कहानीकार प्रेमचंद में एक अच्छा दोस्त और सलाहकार पाते हैं। समाज के अन्यायी और अत्याचारी, निठल्ले और मुफ़्तखोर, अंग्रेजी राज के वफ़ादार मददगार प्रेमचंद में अपनी सूरत देख सकते हैं जो जनता का पक्ष लेने वाले एक सजग साहित्यकार को दिखाई देती थी। *15

नारी चित्रण की त्रिवेणी में बहने वाली एक धारा उस नारी की है, जो अपने आदर्श को कभी नहीं छोड़ती, वह उसी को अपना जीवन समझती है, उसकी पूजा उसका आदर्श है, अपने मन-मंदिर में स्थापित आदर्श की मूर्ति से ही वह प्रेरणा प्राप्त करती है और दूसरी धारा है, यथार्थ की ओर उन्मुख स्त्री। जो सभी दशाओं में केवल सच्चाई को स्वीकार करती है तथा उसके लिए अपने आप को उपयुक्त मानती है। तीसरी धारा प्रेम के लिए सब कुछ कर गुजरने वाली प्रेमिका और नारी। जो पुरुष पर मोहित होकर अपने जीवन को उसी के जीवन में विलीन कर लेती है और चाहती है कि उसका प्रेमी उसे ही प्यार दे। यहां उम्र का कोई फासला मायने नहीं रखता है। विवाह के बंधन में बंध चुके पुरुष को भी वह प्रेम करती है और चाहती है कि वह अपना दाम्पत्य का धागा तोड़ कर मेरे साथ रहे। अगर उसे अपने मन के मुताबिक प्यार मिला तो वह रहेगी, नहीं तो रिश्ते को तोड़ कर वह अन्य स्थानों की ओर बह जाएगी। प्रेमचंद ने सही ही कहा है- "स्त्री का प्रेम पानी का धार होता है, जिस तरफ़ ढाल देखता है उसी तरफ ढल जाता है। "

संदर्भ ग्रंथः-

1. नगेन्द्र और डॉ. हरदयाल, संपादक, हिंदी साहित्य का इतिहास-पृष्ट संख्या-564.
2. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, पन्द्रहवां संस्करण -2022, पृष्ठ संख्या-385-386.
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-145.
4. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी साहित्य का सरल इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, पुनर्मुद्रित-2021, पृष्ठ संख्या-116-117.
5. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, दसवां संस्करण-2018, पृष्ठ संख्या-3.
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-229.
7. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, दसवां संस्करण-2018, पृष्ठ संख्या-113.
8. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग अनुपम प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-53.
9. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग- अनुपम प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-46.
10. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग- अनुपम प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-68.
11. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी साहित्य का सरल इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, पुनर्मुद्रित-2021, पृष्ठ संख्या-117.
12. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग-4, अनुपम प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-143.
13. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग-4, अनुपम प्रकाशन, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या-76.
14. नगेन्द्र और डॉ. हरदयाल, संपादक, हिंदी साहित्य का इतिहास-पृष्ट संख्या-732.
15. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, दसवां संस्करण-2018, पृष्ठ संख्या-117.

•